

DAILY CURRENT AFFAIRS

IN HINDI

SPECIAL FOR UPSC & GPSC EXAMINATION

DATE : 17-11-25



The Hindu Important News Articles & Editorial For UPSC CSE

Monday, 17 Nov, 2025

Edition : International Table of Contents

Page 06 Syllabus : GS 3 – Climate Change / Environment / Prelims	भारत जलवायु वित्त तक पहुंच के लिए तंत्र तैयार करेगा
Page 07 Syllabus : GS 3 : Science & technology / Prelims	क्वांटम घड़ी को पढ़ने में टिक-टिक बनाए रखने से कहीं अधिक खर्च होता है
Page 08 Syllabus : GS 3 : Environment & Ecology/ Prelims	दिल्ली का वायु प्रदूषण - एक दुष्ट समस्या
In News Syllabus : GS 2 : Governance & Polity / Prelims	डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण नियम, 2025
In News Syllabus : Prelims	बंदरगाह भारत की कृषि निर्यात महत्वाकांक्षा का समर्थन कैसे कर सकते हैं
Page 08 : Editorial Analysis Syllabus : GS 2 Polity, Governance	"पाँक्सो अधिनियम डिजाइन द्वारा लिंग-तटस्थ है"

भारत ने 13 देशों और एक अफ्रीकी क्षेत्रीय गठबंधन के साथ ग्रीन क्लाइमेट फंड (जीसीएफ) से जलवायु और प्रकृति वित्त तक पहुंच को सुव्यवस्थित करने के लिए एक नया "देश मंच" बनाने की घोषणा की है। ब्राजील के बेलेम में COP30 वार्ता के दौरान अनावरण की गई इस पहल का उद्देश्य लंबे समय से चली आ रही प्रक्रियात्मक बाधाओं को दूर करना और जलवायु वित्त के वितरण और उपयोग में सुधार करना है।

India to spruce up mechanisms for accessing climate finance

A new 'country platform' is expected to help India tap Green Climate Fund resources more easily; the fund has faced criticism from developing countries for its complex disbursement procedures and lack of technical support to avail it

Jacob Koshy
BELEM, BRAZIL

India was among the 13 countries and a regional alliance of African countries that announced plans to set up a national platform for "climate and nature finance" at a ministerial event during the COP30 under way in Belem, Brazil, on Saturday. This would be coordinated through the Green Climate Fund (GCF), an institutional mechanism that has been at work since 2015, to fund projects in developing countries to adapt to unfolding climate change and to invest in clean energy.

Despite being the world's largest institutional mechanism for disbursing funds for climate finance, with commitments worth \$19 billion, only a quarter of it has been properly allocated as of 2024. The GCF faces criticism from developing countries that its disbursement mechanisms are often difficult to comply with and there is limited technical support to avail these funds.

A stated goal of the GCF is to ensure that its funds are evenly split between adaptation and mitigation.

The Belem ministerial event, co-hosted by Brazil's Ministry of Finance and



The ministerial event on climate finance under way in Belem, Brazil, on Saturday. X/@THEGCF

the GCF, brought together Ministers and other senior government officials as well as international, national, public, and private climate finance leaders.

New 'country platform'
While India already engages with the GCF, it is believed that a new "country platform" for "climate and nature finance" would help the country move away from a "fragmented approach" towards accessing funds.

This is especially significant in a year when calls from developing countries for prioritising adaptation and improving access to climate finance are particu-

larly resonant, especially at the ongoing proceedings of COP30. *The Hindu* reached out to the Environment Ministry for more clarity on the country platform but did not receive a comment until press time.

Halfway through negotiations on Saturday, India was leading developing countries' clamour for a focused discussion and road map on a section of the Paris Agreement called Article 9.1, which mandates that developed countries provide funds for mitigation and adaptation.

The announcement of such a platform also ties in with expectations that negotiators may finalise a list

of indicators that can be used to measure progress towards the so-called Global Goal on Adaptation (GGA). Progress on producing an agreed list of indicators has been difficult, with nearly 90 experts working over two years to narrow down a list of almost 10,000 potential indicators to a final set of just 100, which is supposed to be adopted at COP30, according to a report by Molly Lempriere, an analyst for Carbon Brief, an agency that tracks climate negotiations.

However, with India, among other countries expected to announce National Adaptation Plans,

there is greater vocal support and interest in having a concrete outcome on the GGA.

Announcing their country and regional platforms, representatives from the African Islands States Climate Commission (AISCC) – Cambodia, Colombia, India, Kazakhstan, Lesotho, Mongolia, Nigeria, Oman, Panama, Rwanda, the Dominican Republic, Togo, and South Africa – shared their vision and strategies for leveraging country platforms to accelerate climate action. This brings the number of platforms to 16, with the previously established Brazil Country Platform and Caribbean Regional Platform, according to a note from the GCF.

GCF support for India

As of August 2024, India has received commitment from the GCF for 11 projects worth \$782 million to mitigate and adapt to climate change in sectors, including water, clean energy, coastal, livelihood, transport, medium and small enterprises and climate start-ups. A bulk of the financing is in the form of concessional loans.

India's Environment Ministry is the primary access point (or the Nodal Designated Authority) for GCF-linked funding.

सैतिक संदर्भ

1. ग्रीन क्लाइमेट फंड (जीसीएफ) क्या है?

- UNFCCC के तहत 2010 में स्थापित।

- विकासशील देशों का समर्थन करने का उद्देश्य:
 - जलवायु परिवर्तन का शमन
 - जलवायु प्रभावों के प्रति अनुकूलन
- सालाना 100 बिलियन डॉलर जुटाने के लिए प्रतिबद्ध है (विकसित देशों द्वारा सामूहिक लक्ष्य)।
- भारत 2015 से जीसीएफ फंड का उपयोग कर रहा है।

2. देश मंच - अवधारणा

- राष्ट्रीय मंत्रालयों, वित्तीय संस्थानों और अंतर्राष्ट्रीय भागीदारों को शामिल करते हुए एक समन्वय तंत्र।
- उद्देश्य:
 - परियोजना प्रस्तावों को सुव्यवस्थित करें
 - राष्ट्रीय जलवायु प्राथमिकताओं को एकीकृत करना
 - विखंडन कम करें
 - वित्त प्रवाह की गति और पैमाने को बढ़ाएं

3. पेरिस समझौते का अनुच्छेद 9

- विकसित देश करेंगे:
 - विकासशील देशों को वित्तीय सहायता प्रदान करना
 - जलवायु वित्त पर पारदर्शी रूप से रिपोर्ट करें
- पूर्वानुमेयता, पारदर्शिता और पर्याप्तता पर जोर देता है।

वर्तमान संदर्भ

1. अब कंट्री प्लेटफॉर्म की जरूरत क्यों है?

- जीसीएफ के पास 19 अरब डॉलर की प्रतिबद्धताएं हैं, लेकिन केवल एक-चौथाई का ही वितरण किया जाता है।
- विकासशील देशों का सामना:
 - जटिल आवेदन प्रक्रियाएं
 - तकनीकी सहायता की कमी
 - धीमी संवितरण समयसीमा
- भारत जलवायु वित्त के लिए एक खंडित दृष्टिकोण से अधिक एकीकृत राष्ट्रीय प्रणाली की ओर बढ़ना चाहता है।

2. COP30 में विकास

- भारत और 13 देशों ने योजनाएं प्रस्तुत कीं।
- अप्रीकी द्वीप राज्य जलवायु आयोग और कई अन्य ने इसी तरह के प्लेटफार्मों की घोषणा की।
- वैश्विक प्लेटफार्मों की संख्या बढ़कर 16 हो गई।

3. भारत का प्रदर्शन

- **अगस्त 2024 तक:**
 - भारत को जीसीएफ से 782 मिलियन डॉलर मिले।
 - कवर करने वाली 11 परियोजनाओं का समर्थन करता है:
 - नवीकरणीय ऊर्जा
 - तटीय लचीलापन
 - परिवहन
 - एमएसएमई
- अधिकांश निधियां रियायती ऋण हैं, अनुदान नहीं।

4. वैश्विक जलवायु वित्त में चुनौतियाँ

- अनुकूलन पर वैश्विक लक्ष्य (जीजीए) के लिए बातचीत अभी भी धीमी है।
- अनुकूलन प्रगति पर नज़र रखने के लिए संकेतकों से सहमत होने में कठिनाई।

भारत के लिए महत्व

1. जलवायु निधि तक बेहतर पहुंच

मंच मदद करेगा:

- फास्ट-ट्रैक परियोजना प्रस्ताव
- बड़े जलवायु वित्त जुटाएं
- भारत के जलवायु लक्ष्यों (एनडीसी) का समर्थन करना

2. खंडित संस्थागत चैनलों पर निर्भरता कम करना

वर्तमान में:

- कई मंत्रालयों और एजेंसियों के माध्यम से प्रस्ताव भेजे गए
- जमा करने और अनुमोदन में देरी

यह मंच एक केंद्रीय जलवायु वित्त केंद्र के रूप में कार्य कर सकता है।

3. अनुकूलन वित्त को बढ़ावा

भारत पर्याप्त अनुकूलन वित्तपोषण प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहा है; मंच हो सकता है:

- प्राथमिकता वाले क्षेत्रों की पहचान करने में मदद करें
- डेटा और संकेतकों को वैश्विक प्रक्रियाओं के साथ संरेखित करें
- निजी वित्त लाओ

4. जलवायु वार्ता में भारत के रुख को मजबूत करना

एक कार्यात्मक मंच भारत की मदद करता है:

- अन्य विकासशील देशों के लिए एक उदाहरण स्थापित करें
- जी-77 और चीन समूह की मांगों को मजबूत करना
- पूर्वानुमानित, पारदर्शी वित्त पोषण के लिए विकसित देशों पर दबाव डालें

आगे की चुनौतियाँ

1. प्रशासनिक क्षमता की बाधामंत्रालयों, निजी क्षेत्र और जीसीएफ मानदंडों का समन्वय जटिल है।
2. तकनीकी विशेषज्ञता अंतराल कई राज्यों में बैंक योग्य प्रस्तावों का मसौदा तैयार करने के लिए जलवायु वित्त विशेषज्ञों की कमी है।
3. अनुदान पर रियायती ऋणों पर निर्भरता ऋण के बोझ की चिंता बढ़ाती है।
4. अनुकूलन संकेतकों पर धीमी वैश्विक वार्ताबड़े अनुकूलन निधि तक पहुंचने की भारत की क्षमता को प्रभावित करती है।

आगे की राह

1. राष्ट्रीय जलवायु वित्त वास्तुकला को मजबूत करना

- राज्य के विभागों में क्षमता निर्माण।
- जीसीएफ प्रस्ताव प्रारूपण पर अधिकारियों को प्रशिक्षित करना।

2. सार्वजनिक-निजी भागीदारी को बढ़ावा देना

इसके लिए निजी पूंजी जुटाएं:

- नवीकरणीय ऊर्जा
- हरित हाइड्रोजन
- जलवायु-लचीला बुनियादी ढांचा

3. पारदर्शिता और सटीक रिपोर्टिंग सुनिश्चित करें

- एमआरवी (मॉनिटरिंग, रिपोर्टिंग, सत्यापन) सिस्टम में सुधार करें।
- तेज़ अनुमोदन के लिए वैश्विक अनुकूलन संकेतकों के साथ संरेखित करें।

4. जीसीएफ संरचना में सुधार के लिए जोर

- सरलीकृत प्रस्ताव प्रक्रियाएं
- तेजी से वितरण
- अनुकूलन के लिए अधिक अनुदान

समाप्ति

एक देश मंच का निर्माण भारत के लिए वैश्विक जलवायु वित्त तक अपनी पहुंच बढ़ाने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है। जलवायु प्रभावों के तेज होने और अनुकूलन की जरूरतों के बढ़ने के साथ, सुव्यवस्थित वित्तीय तंत्र आवश्यक हैं। जबकि चुनौतियां बनी हुई हैं - विशेष रूप से तकनीकी क्षमता और धीमी वैश्विक वार्ता के आसपास - भारत की सक्रिय भागीदारी विकासशील देशों के बीच अपने जलवायु लचीलेपन और नेतृत्व को काफी मजबूत कर सकती है।

UPSC Prelims Practice Question

प्रश्न: ग्रीन क्लाइमेट फंड (जीसीएफ) के संदर्भ में, निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए:

1. यह UNFCCC के तहत विकासशील देशों को शमन और अनुकूलन में मदद करने के लिए स्थापित किया गया था।
2. भारत 2015 से जीसीएफ फंड का उपयोग कर रहा है।
3. भारत की अधिकांश जीसीएफ फंडिंग अनुदान के रूप में आई है, रियायती ऋण के रूप में नहीं।

उपर्युक्त कथनों में से कौन-सा/से सही है/हैं?

- A. केवल 1 और 2
- B. केवल 2 और 3
- C. केवल 1 और 3
- D. 1, 2 और 3

उत्तर: A

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न: "जलवायु और प्रकृति वित्त के लिए देश के प्लेटफार्मों के निर्माण से विकासशील देशों की ग्रीन क्लाइमेट फंड (जीसीएफ) तक पहुंच में काफी सुधार हो सकता है। हालांकि, संरचनात्मक और प्रक्रियात्मक चुनौतियां बनी हुई हैं। चर्चा कीजिए। (150 शब्द)"

फिजिकल रिव्यू लेटर्स में प्रकाशित एक हालिया अध्ययन ने एक असामान्य घटना का खुलासा किया है: क्वांटम घड़ी को पढ़ने से इसे बनाए रखने की तुलना में कहीं अधिक ऊर्जा की खपत होती है, समय माप के शास्त्रीय विचारों को उलट दिया जाता है। इस खोज का क्वांटम ऊष्मप्रवैगिकी, क्वांटम सूचना प्रणाली, अति-सटीक समय-पालन और संभावित रूप से परमाणु घड़ियों और क्वांटम प्रौद्योगिकियों के भविष्य पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

ऑस्ट्रिया, स्विट्जरलैंड, आयरलैंड, इटली और यूके के शोधकर्ताओं को शामिल करने वाले अध्ययन से पता चलता है कि क्वांटम प्रणाली से समय की जानकारी निकालने से स्वाभाविक रूप से एन्ट्रॉपी पैदा होती है, जिससे माप का कार्य स्वयं महंगा हो जाता है।

Surprise: reading a quantum clock can cost more than keeping it ticking

A clock's counter always increases, which aligns with our everyday experience that it ticks forward; the swinging of a pendulum or the vibrations of a quartz crystal are processes that consume energy and produce entropy, driving the clock's hands, but things are not so simple in the quantum world

Yusufcan Mikhait

Time for us is a constant, relentlessly moving forward. The ticking of a clock on the wall, the steady march of seconds on a digital display – they're such familiar concepts that we rarely stop to consider the physical processes that underlie them.

At its heart, any clock is a physical system that evolves in a predictable way, creating a record of the passage of time. Scientists are now exploring what underpins this process at the smallest possible scale, in the quantum realm, and their findings could have profound implications for the development of quantum technologies and scientists' grasp of the laws that govern the universe at its most fundamental.

A study published in *Physical Review Letters* on November 14 by researchers from Austria, Italy, Ireland, Switzerland, and the UK, delved into this world by building and analysing a quantum clock. The researchers reported a surprising insight in their paper: that the energy cost of simply looking at a clock to read the time could exceed the energy required to make the clock tick in the first place. This discovery, it's borne out in more research, could have important implications – for the future of ultra-precise timekeeping with devices like optical clocks as well as for the development of quantum technologies and scientists' grasp of the laws that govern the universe at its most fundamental.

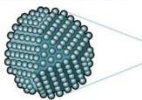
Shattered glass
Understanding the researchers' intuition demands first appreciating an important concept from physics called entropy. It's often colloquially described as a measure of disorder. In formal terms, entropy is linked to the second law of thermodynamics, which states that in an isolated system, entropy always tends to increase. This relentless increase is what gives time its arrow, its direction of evolution.

For example, a shattered pane of glass has more entropy than one that's intact, and we will never see the shards spontaneously reassemble. It's this principle of irreversible processes that allows a clock to create a lasting record of the past, distinguishing it from the future. For all practical purposes, a clock's counter always increases, which aligns with our everyday experience that clocks always tick "forward".

At the macroscopic scale of our everyday lives, this is straightforward. The swinging of a pendulum or the vibrations of a quartz crystal are processes that consume energy and produce entropy, driving the clock's hands forward. But in the quantum world, things are not so simple. Quantum systems are governed by probabilities and can exhibit strange behaviours. The amount of entropy produced by quantum processes is generally orders of magnitude lower than in classical processes. This can lead to situations where, due to random fluctuations, a quantum clock might briefly tick "backward".

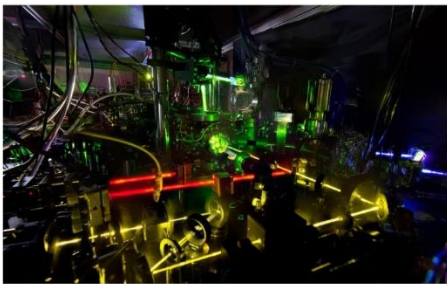
This presents a conceptual tension. A clock, by its very definition, must be an irreversible device that reliably distinguishes past from future. How can a quantum system, with its inherent randomness and potential for backward steps, function as a time clock?

Ticks of a quantum clock
The authors of the new study hypothesised that the solution lies not just in the clock's internal mechanism, or its clockwork, but in the process of measurement itself. They proposed that the act of extracting information from the quantum system – i.e. observing the ticks to create a classical, readable record – must also produce entropy. This "cost of observation" could be the missing piece that ensures the forward flow of time.



A quantum dot is a crystal that often consists of just a few thousand atoms. In terms of size, it has the same relationship to a football as a football has to the size of the Earth

The researchers used the movement of single electrons across a pair of quantum dots – whose size is explained here – to demonstrate the tick of a clock. JOHN JAMES FOR THE ROYAL SOCIETY OF SCIENTISTS



A clock, by its very definition, must be an irreversible device that reliably distinguishes past from future. Atomic clocks, like the 10-million-lattice clock shown here, can make that distinction with extreme precision. IIST

even when the quantum clockwork itself is at a standstill, the team figured.

The motivation for the new study was to experimentally test this idea. The team aimed to build a quantum clock where they could separately measure the entropy produced by the internal clockwork and the entropy produced by the measurement apparatus. This would allow the researchers to directly compare these two costs and determine which one is more fundamental to the process of timekeeping at the quantum scale. Such an experiment would be the first to explore the interplay between the entropy produced by a microscopic clockwork and its macroscopic measurement apparatus.

To realise their quantum clock, the scientists used a device called a double quantum dot (DQD). Imagine two minuscule human-made islands in a semiconductor material, so small that they can hold only one extra electron at a time. These are quantum dots. Their inventors were rewarded with the Nobel Prize for chemistry in 2023.

By applying precise voltages, the researchers could control the movement of a single electron, causing it to tunnel from a source onto the first dot, then to the second dot, and finally off to a drain. (The demonstration of quantum tunnelling in a large circuit won the Nobel Prize for physics in 2025.) This sequential movement of an electron constituted a single tick of the team's clock.

Boasting the time
The state of the DQD could be in one of three configurations: no excess electron on either dot (which we'll call state 0), an electron on the left dot (state 1), or an electron on the right dot (state 2). A forward tick is a full cycle, for instance from state 0 to 1, to 2 and back to 0, as the electron traversed the dots.

To "read" the time, the researchers needed to know which state the DQD was in at any given moment. They accomplished this using a nearby charge sensor – which was another quantum dot whose electrical properties were sensitive to the location of the electron in the DQD. By measuring the current flowing through this sensor, they could deduce whether the DQD was in state 0, 1, or 2.

In the measurement process, however, wasn't free. It required energy and therefore produced entropy. The team used two different methods to read the sensor: a direct-current (DC) measurement and a more sophisticated radio-frequency (RF) reflectometry

The interaction between a quantum system and its classical measurement device, but just a technical detail, it's a central part of the physics involved. The entropy produced by the amplification and measurement of a clock's ticks is the most important and fundamental thermodynamic cost of timekeeping at the quantum scale

technique. This allowed them to vary and precisely measure the power dissipated, and thus the entropy generated, by the act of observation itself. By simultaneously controlling the voltage across the DQD, which dictated the energy dissipated by the clock's tick, they could independently study the thermodynamic cost of both the clockwork and "reading the time".

Source of irreversibility
The results of the experiment seemed striking. The researchers first examined the relationship between the clock's precision and the entropy produced by its internal workings, i.e. the DQD. As predicted by thermodynamic principles, they found that a more precise clock – one with more regular and forward-moving ticks – required more entropy. When the DQD was brought to equilibrium, where forward and backward ticks were equally likely, the clockwork produced no net entropy, and its ability to record the passage of time vanished.

However, the researchers' more remarkable claim emerged when they analysed the entropy cost of the measurement process. They found that the entropy cost of extracting the classical ticks from the quantum clock was the dominant factor by an astonishing three orders of magnitude. In other words, the energy dissipated to simply find out what time it was dwarfed the energy needed to make the clock tick, by a factor of a billion.

The team also showed that the measurement process could effectively reverse the information that makes the device a clock. This was because even when the internal clockwork was at equilibrium, i.e. producing no entropy, the act of continuously monitoring the DQD created an irreversible, classical record of its state changes. This record, generated at a significant entropy cost by

the measurement device, allowed the researchers to estimate the passage of time. Here, in your house as well, reading time from the device on the wall gives you the time information that also makes the device's identity a "clock". But here's what's unique about the quantum clock: the team interpreted their results as evidence that in the DQD clock, the dominant source of irreversibility needed for timekeeping comes from the act of observation, not from the clockwork itself.

These findings also reinforce those reported by a different group in 2022 that "reading the clock" is an invasive process in quantum timekeeping that can't be taken for granted. The new study also complicates and deepens the understanding of precision reported in the 2022 study by showing that the effect of measurement isn't necessarily "bad". Instead, "reading the clock more often is better", the new study seems to report a more complex reality: the relationship between measurement strength and precision depends on the clockwork.

Physics of timekeeping
The study's implications could be far-reaching, touching on fundamental physics, metrology (the science of measurement), and the future of quantum computing. Perhaps foremost, it suggests that the oft-ignored interaction between a quantum system and its classical measurement device isn't just a technical detail. It's a central part of the physics involved. The entropy produced by the amplification and measurement of a clock's ticks is the most important and fundamental thermodynamic cost of timekeeping at the quantum scale.

At least one implication is potentially practical: current atomic clocks – which are some of the most accurate timekeeping devices to exist – could be improved by designing more thermodynamically efficient measurement systems. That is, by minimising the entropy cost of observation, it may be possible to create clocks that are even more precise.

The principles the new study has explored are also not limited to clocks. Any quantum system will depend on being able to precisely control and measure quantum states. Understanding the thermodynamic costs associated with extracting information from a quantum system is crucial for engineers to design efficient and scalable quantum machines. The authors' approach lends itself to a broader line of work on the energy cost of quantum measurements, which may eventually inform how engineers design quantum computers.

Finally, some physicists interpret such results as suggesting that the dense, unfathomable flow of time that we experience may not be a solid property of the microscopic world itself. Instead, it could be a feature that emerges anew from the process of extracting and recording information on a macroscopic scale.

In the classical proverb, a watched pot never boils. In these quantum clock experiments, the pot certainly boils, but turning its bubbles into a reliable stopwatch turns out to be costly.

medismiti@rediffmail.com

स्थैतिक संदर्भ

1. क्वांटम घड़ी क्या है?

- एक उपकरण जिसका टाइमकीपिंग क्वांटम यांत्रिक अवस्थाओं (जैसे इलेक्ट्रॉन टनलिंग, परमाणु संक्रमण) पर आधारित होता है।
- शास्त्रीय घड़ियों (पेंडुलम, क्वार्ट्ज क्रिस्टल) के विपरीत, एक क्वांटम घड़ी है:
 - संभाव्य व्यवहार द्वारा शासित
 - यादृच्छिक पिछड़े उतार-चढ़ाव के लिए अतिसंवेदनशील
 - माप-प्रेरित गड़बड़ी के प्रति संवेदनशील

2. ऊष्मप्रवैगिकी का दूसरा नियम

- एक पृथक प्रणाली की एन्ट्रॉपी कभी कम नहीं होती है।
- यह समय को दिशा देता है ("समय का तीर")।

हालाँकि, क्वांटम सिस्टम अस्थायी रूप से स्थानीय कमी या उलटफेर दिखा सकते हैं।

3. क्वांटम यांत्रिकी में मापन

- पर्यवेक्षक प्रभाव के अनुसार, क्वांटम प्रणाली को मापना:
 - इसकी स्थिति को प्रभावित करता है
 - विसंगतता का परिचय दे सकता है
 - थर्मोडायनामिक लागत लगाता है (लैंडौर का सिद्धांत)

4. लैंडौर का सिद्धांत

- सूचना प्रसंस्करण में न्यूनतम थर्मोडायनामिक ऊर्जा लागत होती है।
- जानकारी को मिटाने या देखने से एन्ट्रॉपी उत्पन्न होती है।

यह सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि क्वांटम घड़ी को देखने में ऊर्जा की लागत क्यों होती है।

वर्तमान संदर्भ

1. केंद्रीय खोज

- क्वांटम घड़ी को पढ़ना (समय की जानकारी निकालना) परिमाण के आदेशों की खपत करता है क्वांटम घड़ी को टिक-टिक रखने की तुलना में अधिक ऊर्जा की खपत करता है।

2. शोधकर्ताओं ने क्या किया

- का उपयोग करके एक क्वांटम घड़ी बनाई:
 - एक डबल क्वांटम डॉट (DQD)
 - इलेक्ट्रॉन टनलिंग इवेंट
 - आस-पास के क्वांटम सेंसर
- इलेक्ट्रॉन की स्थिति में परिवर्तन को देखकर समय मापा।

3. मुख्य अवलोकन

- घड़ी से शास्त्रीय जानकारी निकालना:
 - निरंतर अवलोकन की आवश्यकता
 - महत्वपूर्ण एन्ट्रापी का उत्पादन किया
 - घड़ी की अपनी परिचालन ऊर्जा की तुलना में कहीं अधिक ऊर्जा अपव्यय का कारण बना

इस प्रकार, माप की लागत सिस्टम को चलाने की लागत पर हावी है।

4. ऐसा क्यों होता है

- क्वांटम सिस्टम संभाव्य अवस्थाओं में हैं।
- घड़ी का आंतरिक विकास एन्ट्रापी उत्पन्न नहीं करता है यदि देखा नहीं जाता है।
- लेकिन समय जानने के लिए, किसी को यह करना होगा:
 - शास्त्रीय जानकारी निकालें
 - सिस्टम को स्थिर करें
 - थर्मोडायनामिक "सूचना की लागत" का भुगतान करें

5. टाइमकीपिंग के लिए निहितार्थ

- अल्ट्रा-छोटे पैमाने पर, पढ़ने के समय का कार्य समय के विकास की तुलना में अधिक महंगा है।
- यह अंतर्दृष्टि शास्त्रीय धारणा को चुनौती देती है कि:

"घड़ी को चलाने की तुलना में उसे पढ़ना तुच्छ है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के लिए महत्व

1. क्वांटम प्रौद्योगिकियां

यह शोध प्रभावित करता है:

- क्वांटम कंप्यूटिंग
- क्वांटम संचार
- अल्ट्रा-सटीक सेंसर
- अगली पीढ़ी की परमाणु घड़ियाँ

2. अल्ट्रा-सटीक टाइमकीपिंग

- आधुनिक प्रौद्योगिकियां सटीक घड़ियों (जीपीएस, दूरसंचार, उच्च आवृत्ति ट्रेडिंग) पर निर्भर करती हैं।
- क्वांटम घड़ियाँ सटीकता में क्रांति ला सकती हैं, लेकिन:
 - मापन सटीकता को सीमित करता है
 - ऊर्जा लागत लघुकरण को बाधित कर सकती है

3. सूचना की थर्मोडायनामिक लागत

- इस विचार का समर्थन करता है कि जानकारी की भौतिक लागत होती है।

- बीच पुल को मजबूत करता है:
 - क्वांटम सूचना सिद्धांत
 - तापगतिकी
 - सांख्यिकीय यांत्रिकी

चुनौतियाँ हाइलाइट की गईं

1. मापन बैक-एक्शन

- क्वांटम घड़ी पढ़ने से यह परेशान हो सकता है।

2. एन्ट्रापी जनरेशन

- माप एन्ट्रापी पैदा करता है, भले ही घड़ी का विकास न हो।

3. ऊर्जा अक्षमता

- पठनीय शास्त्रीय डेटा निकालना अत्यधिक ऊर्जा-गहन है।

4. स्केलेबिलिटी मुद्दे

- व्यावहारिक क्वांटम घड़ियों को कम से कम करना चाहिए:
 - विसंगतता
 - थर्मोडायनामिक ओवरहेड्स

समाप्ति

अध्ययन से एक प्रति-सहज सत्य का पता चलता है: क्वांटम दुनिया में, सूचना की अपनी एक लागत होती है, और क्वांटम घड़ी को पढ़ने के लिए इसे बनाए रखने की तुलना में अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह खोज क्वांटम माप, एन्ट्रापी और समय के बारे में हमारी समझ को गहरा करती है और साथ ही सटीक टाइमकीपिंग और क्वांटम प्रौद्योगिकियों के भविष्य को भी आकार देती है। जैसा कि राष्ट्रीय क्वांटम मिशन के माध्यम से भारत सहित देश क्वांटम वर्चस्व की ओर बढ़ रहे हैं, इस तरह के निष्कर्ष कुशल, स्केलेबल क्वांटम सिस्टम को डिजाइन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

UPSC Prelims Practice Question

प्रश्न : क्वांटम घड़ियों के बारे में निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए:

1. उनका कामकाज क्वार्ट्ज कंपन जैसे शास्त्रीय दोलों पर आधारित है।
2. उनके समय को मापने के लिए क्वांटम अवस्थाओं से जानकारी निकालने की आवश्यकता होती है।
3. क्वांटम घड़ी में माप की प्रक्रिया एन्ट्रापी उत्पन्न कर सकती है।

उपरोक्त में से कौन सा/से कथन सही है/हैं?

- A. केवल 1 B. 2 और 3 केवल C. 1 और 2 केवल D. 1, 2 और 3

उत्तर: B

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न: यह खोज कि क्वांटम घड़ी से समय की जानकारी निकालने में इसे चालू रखने की तुलना में अधिक ऊर्जा खर्च होती है, टाइमकीपिंग की शास्त्रीय धारणाओं को चुनौती देती है। इस खोज के वैज्ञानिक महत्व और क्वांटम प्रौद्योगिकियों के लिए इसके निहितार्थ पर चर्चा करें। " (250 शब्द)

हर सर्दियों में, दिल्ली एक गंभीर वायु-गुणवत्ता संकट में डूब जाती है, एक्यूआई नियमित रूप से 400+ ("गंभीर") को पार कर जाता है, जिससे स्कूल बंद हो जाते हैं, उड़ान में देरी होती है और गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रभाव पड़ता है। लेख में तर्क दिया गया है कि दिल्ली का वायु प्रदूषण एक "दुष्ट समस्या" है – एक जटिल, बहुआयामी चुनौती जिसका कोई सरल समाधान नहीं है, जिसके लिए साहसिक नीतिगत हस्तक्षेप, अंतर-राज्य समन्वय और नागरिक भागीदारी की आवश्यकता होती है। यह आवर्ती संकट मौसमी असुविधा के बजाय एक संरचनात्मक विफलता को उजागर करता है।

Delhi's air, a 'wicked problem' in need of bold solutions

Each winter, as Delhi wakes under a grey sky and the air thickens with smoke, the city relives a familiar crisis. Schools close, flights are delayed, and citizens scramble for masks as the Air Quality Index (AQI) routinely breaches 400 – the "severe" mark. Deepavali prompts a fresh round of breast-beating as the spate of firecrackers adds more smoke and pollutants to the already-unbreathable air. But this is not a seasonal inconvenience; it is a chronic public health emergency. And yet, year after year, we treat it as a passing nuisance rather than a structural failure.

Since 2015, I have personally convened and conducted an annual Round Table on Clean Air with different stakeholders – public health experts, environmentalists, science journalists, Members of Parliament, and even Ministers. Every year I seek different institutional partners and a wider circle of attendees in the hope of enlarging the number of those determined to do something about the air we breathe. Yet, little seems to move.

The consequences of breathing the national capital's foul air are devastating. Long-term exposure to Delhi's toxic air can reduce life expectancy by up to 10 years, especially in areas with consistently high PM_{2.5} levels. There is a sharp rise in asthma, bronchitis, chronic obstructive pulmonary disease (COPD), and lung infections, particularly during winter months. Fine particulate matter (PM_{2.5}) penetrates the bloodstream, increasing the risk of heart attacks, strokes and hypertension in Delhi residents, and prolonged exposure to airborne toxins is linked to lung damage due to oxidative stress and DNA damage. Air pollution has even been associated with cognitive decline, depression and anxiety, especially in children and the elderly, as well as to rheumatoid arthritis, lupus and multiple sclerosis, due to systemic inflammation and auto-immune disruptions. People are relocating from Delhi, even at the cost of their careers, in order to avoid exposing their families and themselves to such risks.

The complexity of Delhi's problem

Air pollution costs India an estimated 1.36% of its GDP annually – roughly \$36.8 billion – due to health-care expenses, lost productivity and premature deaths. Delhi's reputation as one of the world's most polluted cities deters international tourists and investors. And yet, resources are being diverted to emergency responses (such as cloud-seeding to precipitate rain, and domestic air purifiers, including for government offices), rather than investing in long-term sustainable solutions.

Delhi's air pollution is not born of a single source. It is the sum of many small catastrophes



Shashi Tharoor

is a fourth-term Member of Parliament (Lok Sabha, Thiruvananthapuram) from the Indian National Congress, and the author of 27 books, mainly about modern India

Delhi can breathe cleaner air again if its citizens act with urgency, coordination and courage, and follow a sustained and science-led strategy

– geographical, meteorological, and man-made – that together create a toxic haze. To solve it, we must first understand its complexity. Delhi's geography itself is a liability. The city lies in a basin-like formation, flanked by the Aravalli hills, which restrict air flow and prevent pollutants from dispersing easily. During October to January, high-pressure systems settle over northern India, leading to temperature inversion – a phenomenon where cooler air near the surface is trapped beneath warmer air above. This inversion, coupled with low wind speeds, locks pollutants close to the ground, turning Delhi into a bowl of poison. This meteorological trap is not unique to Delhi. Cities such as Los Angeles, surrounded by mountains, have faced similar challenges. But they responded with aggressive policy, technological innovation and public engagement. Delhi must do the same.

In Delhi's case, the natural disadvantages are compounded by human negligence. Delhi NCR has over 3.3 crore registered vehicles. Diesel trucks, two-wheelers, and ageing buses spew nitrogen oxides and PM_{2.5} particles into the air. Despite BS-VI (Bharat Stage 6) norms, enforcement remains patchy. Rapid urbanisation has also led to unregulated construction, with debris and dust contributing nearly 27% of PM_{2.5} levels. Covering sites and enforcing dust-control norms are routinely ignored. Factories and power plants in neighbouring States release sulphur dioxide and other toxins. Many still use outdated technologies and lack emission filters.

And then there are the well-known villains everyone likes to blame. Stubble-burning is a hardy perennial: each autumn, farmers in Punjab and Haryana burn crop residue, sending plumes of smoke into Delhi's skies. Despite court orders and subsidies for alternatives, the practice persists due to economic constraints and a lack of viable machinery. Deepavali celebrations and open waste burning add short-term but severe spikes in pollution. Even "green crackers" have proven ineffective when used en masse.

Delhi's air crisis is a textbook example of a "wicked problem" – a challenge too complex, cross-cutting, and politically fraught for any single solution. The causes are interlinked, the stakeholders are fragmented, and the consequences are unevenly distributed.

Global measures to emulate

But this year presents a unique opportunity. For the first time, Delhi and its neighbouring NCR States – Haryana, Uttar Pradesh, Rajasthan – are governed by the same political party, the Bharatiya Janata Party. This alignment can end years of intergovernmental friction and enable a joint Clean Air Mission, backed by scientific expertise and empowered implementation and driven by the central government – which is from

the same party. For an actionable plan, the three States need look no farther than those places that have resolved very similar problems successfully in the not-too-distant past. London, once known for its notorious "pea-souper" smog, introduced an Ultra Low Emission Zone (ULEZ), charging polluting vehicles and incentivising electric mobility. It also invested in green public transport and retrofitted buildings for energy efficiency. Los Angeles overcame its smog crisis through strict vehicle emission standards, clean fuel technologies, and regional coordination across counties. The worst was Beijing, once infamous for its "airpocalypse", where on a visit, two decades ago, I literally could not see out of my hotel window, so thick was the smog. It implemented a multi-year action plan: relocating polluting industries, banning coal in urban areas, and deploying real-time air monitoring. The result: a 35% drop in PM_{2.5} levels over five years.

Delhi must adopt similar measures – not as isolated experiments, but as part of a sustained, science-led strategy. Delhi urgently needs a Unified Airshed Management Plan that treats Delhi NCR as a single pollution zone. The three States must pool resources, align regulations, and coordinate enforcement across their borders. This must be accompanied by real-time monitoring and public "dashboards" announcing figures and achievements. Transparency builds trust. Citizens must know what they are breathing – and what is being done about it. We must also incentivise EV adoption, electrify public transport, expand metro networks, and deploy electric buses, to reduce reliance on private fuel-burning vehicles. With political will, it should not be impossible to regulate construction and waste: enforce dust-control norms, ban open waste burning, and penalise violators. True, farmers will need to be supported with alternatives: governments must scale up access to Happy Seeders and bio-decomposers, to make stubble management economically viable.

A behavioural issue

Citizen engagement is key. Pollution is not just a governance issue – it is a behavioural one. Campaigns, school programmes, and community initiatives must make clean air a shared responsibility. The persistence of Delhi's air pollution is not an act of nature. It is a consequence of choices – and a reflection of priorities. If we continue to treat it as a seasonal inconvenience, with headlines every Deepavali and inaction thereafter, we will condemn millions to chronic illness, economic loss, and environmental degradation.

But if we act, with urgency, coordination and courage, we can rewrite the narrative. Delhi can breathe again. The question is not whether we know what to do. It is whether we will do it.

स्थैतिक संदर्भ

1. वायु प्रदूषण क्या है?

वायु प्रदूषण हवा में हानिकारक पदार्थों की उपस्थिति को संदर्भित करता है - पार्टिकुलेट मैटर ($PM_{2.5}$, PM_{10}), NO_x , SO_2 , ओजोन, हाइड्रोकार्बन, आदि।

2. प्रमुख प्रदूषक

- $PM_{2.5}$ → महीन कण <2.5 माइक्रोन; फेफड़ों, रक्तप्रवाह में प्रवेश करें
- PM_{10} → मोटे कण
- NO_2 , SO_2 , CO, ओजोन

3. AQI (वायु गुणवत्ता सूचकांक)

- वायु प्रदूषण के स्तर को 0-500 के पैमाने पर मापता है
- 400+ = गंभीर, सभी के लिए खतरनाक

4. "दुष्ट समस्या"

सार्वजनिक नीति में वर्णन करने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला एक शब्द:

- बहुआयामी मुद्दे
- कोई स्पष्ट समाधान नहीं
- परस्पर जुड़े कारण
- दीर्घकालिक प्रणालीगत प्रतिक्रिया की आवश्यकता है

वायु प्रदूषण इस परिभाषा पर पूरी तरह से फिट बैठता है।

5. नियामक निकाय

- सीपीसीबी
- ईपीसीए (अब विघटित)
- CAQM (वायु गुणवत्ता प्रबंधन आयोग)
- एनसीआर प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड

वर्तमान संदर्भ (लेख से)

1. दिल्ली का प्रदूषण लगातार क्यों बना हुआ है

- भौगोलिक, मौसम विज्ञान और मानवजनित कारकों का एक संयोजन
- अरावली से घिरा हुआ → अवरुद्ध वायु प्रवाह
- सर्दियों का तापमान उलटा प्रदूषकों को फँसाता है
- 3.3 करोड़ पंजीकृत वाहन
- औद्योगिक उत्सर्जन, निर्माण धूल
- बायोमास जलाना और पराली जलाना (पंजाब और हरियाणा)

- पटाखे
- पुरानी औद्योगिक प्रौद्योगिकियां
- मौजूदा कानूनों का खराब प्रवर्तन

2. स्वास्थ्य प्रभावों पर प्रकाश डाला गया

- जीवन प्रत्याशा में 10 साल तक की कमी
- अस्थमा, सीओपीडी, ब्रोंकाइटिस में वृद्धि
- दिल का दौरा, स्ट्रोक, उच्च रक्तचाप
- डीएनए क्षति और ऑक्सीडेटिव तनाव
- मानसिक स्वास्थ्य पर चिंता , अवसाद → प्रभाव पड़ता है
- बच्चे और बुजुर्ग सबसे अधिक प्रभावित

3. शासन विफलताओं की पहचान की गई

- खंडित जिम्मेदारियां (दिल्ली सरकार, हरियाणा, पंजाब, केंद्र, सीएक्यूएम)
- निष्पादन में देरी
- सर्दियों में वृद्धि के दौरान नीतिगत भ्रम
- दीर्घकालिक संरचनात्मक योजना का अभाव

4. सामाजिक-आर्थिक मुद्दे

- आर्थिक तंगी के कारण किसान पराली जलाते हैं
- प्रवासियों, गरीब श्रमिकों को असमान रूप से नुकसान पहुंचाया गया
- स्वास्थ्य लागत बढ़ रही है
- दूसरे शहरों में स्थानांतरित होने वाले लोग

विश्लेषण - दिल्ली की हवा एक "दुष्ट समस्या" क्यों है?

1. बहु-कारण

- वाहन, उद्योग, निर्माण, धूल, कचरा जलाना, पराली जलाना, थर्मल प्लांट

2. बहु-स्तरीय शासन

- केंद्र, दिल्ली सरकार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब → परस्पर विरोधी प्राथमिकताएं

3. मौसमी मौसम संबंधी जाल

- तापमान उलटा, कम हवा की गति, ठंडी हवा, बेसिन जैसी स्थलाकृति

4. सामाजिक-आर्थिक बाधाएं

- फसल चक्र पर निर्भर किसान
- शहरी गरीब सबसे ज्यादा प्रदूषण के संपर्क में

5. व्यवहार आयाम

- लोग पटाखों का इस्तेमाल करते हैं
- उच्च निजी वाहन निर्भरता
- कमजोर अनुपालन

6. अपर्याप्त प्रवर्तन

- कमजोर कार्यान्वयन → नियम मौजूद हैं
- उद्योग पुरानी तकनीक का उपयोग करते हैं

लेख में हाइलाइट किए गए प्रमुख समाधान

1. अंतर-राज्यीय सहयोग (महत्वपूर्ण)

- दिल्ली अकेले प्रदूषण का समाधान नहीं कर सकती
- पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश के साथ समन्वित प्रयास

2. दीर्घकालिक संरचनात्मक उपाय

- वाहन पर निर्भरता कम करें
- सार्वजनिक परिवहन में सुधार करें
- अल्ट्रा लो एमिशन जोन (लंदन मॉडल)

3. पराली प्रबंधन

- हैप्पी सीडर, पूसा बायो-डीकंपोजर को बढ़ावा दें
- एमएसपी-लिंकड प्रोत्साहन प्रदान करें
- विकेन्द्रीकृत मशीनरी बैंक स्थापित करें
- जलने और इनाम के विकल्पों को दंडित करें

4. उद्योग सुधार

- गंदे ईंधन पर प्रतिबंध लगाएं
- उत्सर्जन मानकों को लागू करें
- नवीकरणीय ऊर्जा में बदलाव
- पुराने बिजली संयंत्रों को अपग्रेड करें
- सीमाओं पर सख्त प्रवर्तन

5. निर्माण धूल नियंत्रण

- वास्तविक समय की निगरानी
- भारी जुर्माना
- हरित निर्माण मानदंड

6. व्यवहार समाधान

- जागरूकता + नागरिक भागीदारी
- पटाखों के उपयोग पर अंकुश लगाएं
- साझा गतिशीलता को प्रोत्साहित करें

7. तकनीकी उपाय

- स्मॉग टावर (सीमित प्रभाव)
- पराली जलाने की रिमोट सेंसिंग और उपग्रह निगरानी
- एआई-आधारित ट्रैफ़िक प्रबंधन

स्वच्छ वायु कार्रवाई के लिए चुनौतियाँ

- राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी
- अल्पकालिक: केवल सर्दियों के दौरान की जाने वाली कार्रवाई
- कमजोर प्रवर्तन
- किसानों की आजीविका की बाधाएं
- खराब जवाबदेही
- खंडित शासन
- जनता की उदासीनता
- तेजी से शहरीकरण

समाप्ति

दिल्ली का वायु प्रदूषण एक पुराना संरचनात्मक संकट है, जिसके लिए मौसमी अग्निशमन के बजाय साहसिक, दीर्घकालिक, बहु-स्तरीय हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। जैसा कि लेख में जोर दिया गया है, यह भूगोल, मौसम, आर्थिक दबाव और शासन की विफलताओं से आकार लेने वाली एक "दुष्ट समस्या" है। केवल एक समन्वित, बहु-राज्यीय, बहु-क्षेत्रीय रणनीति - मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति, तकनीकी नवाचार और व्यवहार परिवर्तन के साथ संयुक्त - स्थायी सुधार ला सकती है। स्वच्छ हवा को एक विलासिता के रूप में नहीं, बल्कि एक मौलिक अधिकार और एक साझा जिम्मेदारी के रूप में माना जाना चाहिए।

UPSC Prelims Practice Question

प्रश्न : 'तापमान उलटा' अक्सर इसकी ओर जाता है:

A. airB का उन्नत ऊर्ध्वाधर मिश्रण। प्रदूषकों का फैलाव बढ़ गया। सतह के पास प्रदूषकों का फैसना। निचले क्षोभमंडल में उच्च आर्द्रता का स्तर

उत्तर: C

UPSC Mains Practice Question

दिल्ली के बार-बार होने वाले वायु प्रदूषण को एक "दुष्ट समस्या" के रूप में वर्णित किया गया है, जिसमें जटिल सामाजिक-आर्थिक, तकनीकी और शासन संबंधी चुनौतियाँ शामिल हैं। विभाजित कर।

In news : GS 2 : Governance & Polity

डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम (DPDP अधिनियम), 2023 और DPDP नियम, 2025 का मसौदा एक साथ डेटा सुरक्षा के लिए भारत का पहला व्यापक कानूनी ढांचा है। जैसे-जैसे भारत दुनिया की सबसे बड़ी डिजिटल अर्थव्यवस्थाओं में से एक बन रहा है, गोपनीयता, निगरानी, डेटा दुरुपयोग और पारदर्शिता के मुद्दों ने तात्कालिकता प्राप्त कर ली है। हाल ही में अधिसूचित DPDP नियम, 2025 और सूचना का अधिकार (RTI) अधिनियम, 2005 में संशोधन ने नागरिक अधिकारों, सरकारी जवाबदेही और गोपनीयता और पारदर्शिता के बीच संतुलन के बारे में चिंताएँ पैदा कर दी हैं।

What are Digital Personal Data Protection Rules?

Has the Data Protection Board of India already been formed? Who are data fiduciaries and data principals? How does the DPDP Act aim to protect children? How has the Right to Information Act, 2005 been amended? What has the Mazdoor Kisan Shakti Sangathan said?

EXPLAINER

Aroon Deep

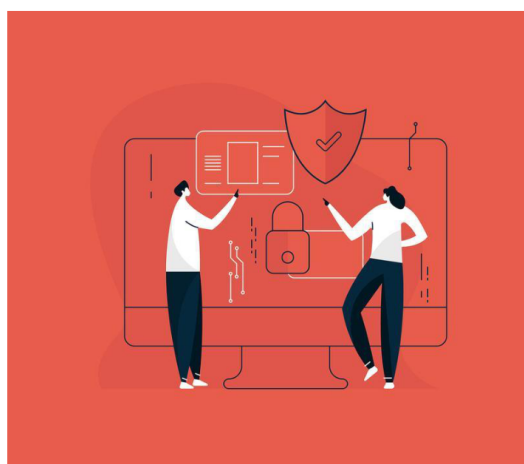
The story so far: The Digital Personal Data Protection Rules (DPDP), 2025 were notified this week, kicking off the formation of the Data Protection Board of India (DPBI), and the legal framework for safeguarding the data of Indians online. The DPDP Act itself was passed in Parliament in August 2023, and the draft of the Rules that were notified on November 14, 2025 were released for consultation in January.

What do the DPDP Act and Rules do?

The DPDP Act, 2023 is India's data protection law just as other major countries have their own data protection regimes such as that in Europe (the General Data Protection Regulation (GDPR)) and Singapore (Personal Data Protection Act, 2012). Like these regimes, the Act sets out some baselines for how companies ("data fiduciaries") should handle data of their users in India ("data principals"). For instance, there must be access control and encryption, along with security audits for large firms ("significant data fiduciaries").

Further, data principals are required to take "informed" consent from their users, and anyone whose data they collect, by giving a summary of what data they are collecting, and how they will use it. The Act also gives users the right to erase or modify data they provide to firms, or to delete it. After a specified period of inactivity, firms are under an obligation to delete the data they have on users. A Data Protection Officer (DPO) has to be appointed by large firms, who will oversee compliance.

The Act also restricts targeted advertising and certain data collection from children. The Rules carve out an



ISTOCKPHOTO

exemption here for parents tracking their children's location.

To allow users to exercise rights across a variety of fiduciaries (accounts over several platforms), the Act and Rules set out the framework for a "Consent Manager," a service that will allow users to manage their data across several fiduciaries, similar to the permissions manager settings on a smartphone.

Data breaches must be reported as soon as possible, the Act says.

Fines for non-compliance for different parts of the law range from ₹10,000 to ₹250 crore.

Are these requirements in force?

No. While over two years have gone by

since the Act was notified, the Ministry of Electronics and Information Technology (MeitY) has chosen to give firms up to 18 more months to comply. Some requirements, like having a DPO be appointed for large firms, goes into effect one year from now.

However, some parts of the Act have kicked into action – such as the DPBI's formation. The DPBI will oversee the Act's implementation and will be a subordinate office of the MeitY. The body will have four members.

Another part of the Act that goes live is the amendment to the Right to Information Act, 2005, which has been furiously resisted by digital rights and transparency groups alike.

Why is the amendment controversial?

The 2023 Act amended Section 8(1)(j) of the Right to Information Act, 2005, which allows citizens to request public information from government bodies. That section allowed government bodies to refuse requests for "personal information", but said that this exemption would not apply if there was a larger public interest in disclosing the information.

The DPDP Act removed that carve-out, allowing government organisations more discretion in what is and isn't personal information, and decline it even if doing so would be in the public interest. The 2023 law was not going to be in force – including this amendment – until the Union government notified it. Transparency activists, such as those belonging to the Mazdoor Kisan Shakti Sangathan (MKSS) and the National Campaign for the People's Right to Information (NCPRI), spent years (since the DPDP Act's 2022 draft was published) resisting this change.

But on Friday, the government disregarded that pushback, and specifically invoked its power to push the amendment through in the form of a notification. Another amendment, to the Information Technology Act, 2000, is not yet in force.

Organisations like the MKSS have worked with grassroots movements to get access to ration "muster rolls" and work order logbooks, allowing them to scrutinise public records for signs of graft and misspending. By implementing a broader definition to what constitutes as "personal information", they have argued, citizens may have no room to conduct such social audits. The amendment could also be used to shield powerful officials' misconduct, they have said. Nikhil Dey, an MKSS founding member, vowed that "[w]e the people will fight back" after the amendment went into force.

THE GIST

▼ The DPDP Act, 2023 is India's data protection law just as other major countries have their own data protection regimes.

▼ Data principals are required to take "informed" consent from their users, and anyone whose data they collect, by giving a summary of what data they are collecting, and how they will use it.

▼ The 2023 Act amended Section 8(1)(j) of the Right to Information Act, 2005, which allows citizens to request public information from government bodies.

वर्तमान संदर्भ

1. डीपीडीपी अधिनियम, 2023 - मुख्य विशेषताएं

- भारत का पहला स्टैंडअलोन डेटा संरक्षण कानून (जैसे यूरोपीय संघ का जीडीपीआर, सिंगापुर पीडीपीए 2012)।
- यह नियंत्रित करता है कि डेटा न्यासी (डेटा एकत्र करने वाली कंपनियां/सरकारी निकाय) डेटा प्रिंसिपलों (उपयोगकर्ताओं) की जानकारी को कैसे संभालती हैं।
- अनिवार्य सहमति, नोटिस, डेटा न्यूनीकरण, उद्देश्य सीमा।
- एन्क्रिप्शन और सुरक्षा सुरक्षा उपायों को बाध्य करता है।
- उपयोगकर्ताओं को अधिकार प्रदान करता है:

- उनके डेटा तक पहुंचने और उसे सही करने का अधिकार
- मिटाने का अधिकार
- शिकायत निवारण का अधिकार

2. डीपीडीपी नियम, 2025 - वे क्या लागू करना चाहते हैं

A. सहमति और डेटा अधिकार

- डेटा फिड्यूसियरी को स्पष्ट रूप से खुलासा करना चाहिए:
 - वे कौन सा डेटा एकत्र करते हैं
 - वे इसे क्यों इकट्ठा करते हैं
 - इसका उपयोग कैसे किया जाएगा
- उपयोगकर्ता किसी भी समय सहमति वापस ले सकते हैं।
- उपयोगकर्ता अपने डेटा को हटाने/संशोधित करने की मांग कर सकते हैं।

B. डेटा प्रोटेक्शन बोर्ड ऑफ इंडिया (DPBI)

- एक न्यायिक निकाय की तरह कार्य करता है।
- संभालती:
 - उल्लंघन सूचनाएं
 - दंड निर्णय
 - अनुपालन निरीक्षण
- हालाँकि अधिनियम को 2023 में अधिसूचित किया गया था, लेकिन अब बोर्ड की स्थापना की जा रही है।

C. दंड

- गंभीरता और गैर-अनुपालन के आधार पर जुर्माना ₹10,000 से ₹250 करोड़ तक हो सकता है।

D. प्रवर्तन समयरेखा

- फर्मों को सभी तकनीकी और संगठनात्मक आवश्यकताओं का पूरी तरह से पालन करने के लिए 18 महीने तक का समय मिलता है।

3. आरटीआई अधिनियम में संशोधन - विवादास्पद क्यों?

सरकार ने आरटीआई अधिनियम, 2005 की धारा 8 (1) (जे) में संशोधन को अधिसूचित किया।

पहले का प्रावधान:

- व्यक्तिगत जानकारी को केवल तभी रोका जा सकता है जब:
 - इसका कोई सार्वजनिक हित नहीं था

- आरटीआई ने गोपनीयता > सार्वजनिक हित में व्यक्तिगत डेटा का खुलासा करने की अनुमति दी।

DPDP अधिनियम द्वारा नया परिवर्तन:

- "सार्वजनिक हित ओवरराइड" को हटा देता है।
- सार्वजनिक अधिकारियों के लिए व्यक्तिगत जानकारी अनुरोधों को अस्वीकार करना आसान बनाता है, भले ही सार्वजनिक हित अधिक हो।

एमकेएसएस, एनसीपीआरआई, कार्यकर्ताओं द्वारा उठाई गई चिंताएं:

- सार्वजनिक ऑडिट करने की क्षमता में बाधा डालता है।
- भ्रष्टाचार या कुशासन को उजागर करना कठिन बना देता है।
- "व्यक्तिगत डेटा की सुरक्षा" की आड़ में गलत काम को ढालने के लिए दुरुपयोग की अनुमति दे सकता है।

उदाहरण:

आरटीआई कार्यकर्ता भ्रष्टाचार का पता लगाने के लिए व्यक्तिगत विवरण जैसे मस्टर रोल, नौकरी के रिकॉर्ड, भूमि आवंटन सूची आदि का उपयोग करते हैं। अब इन्हें रोका जा सकता है।

4. संशोधन की आलोचना क्यों की जा रही है?

- पारदर्शिता और सार्वजनिक जवाबदेही को कमजोर करता है।
- नौकरशाही गोपनीयता की सुविधा प्रदान करता है।
- आरटीआई की प्रभावशीलता को कम कर सकता है – जो भ्रष्टाचार के खिलाफ भारत के सबसे मजबूत उपकरणों में से एक है।
- विरोधाभास: सरकार को डीपीडीपी अधिनियम के प्रमुख दायित्वों से छूट दी गई है, जबकि निजी फर्मों को सख्त अनुपालन का सामना करना पड़ता है।

5. डीपीडीपी अधिनियम भारत के लिए क्यों महत्वपूर्ण है?

अवसर

- भारत की डिजिटल अर्थव्यवस्था में विश्वास बढ़ाता है।
- भारत को वैश्विक डेटा संरक्षण मानदंडों के अनुरूप बनाया
- यूरोपीय संघ, अमेरिका के साथ सीमा पार डेटा प्रवाह के लिए आवश्यक।
- व्यक्तिगत डेटा पर उपयोगकर्ता नियंत्रण को मजबूत करता है।

चुनौतियों

- सरकारी छूट गोपनीयता को कमजोर करती है।
- डेटा संरक्षण बोर्ड की कमजोर स्वतंत्रता।

- गोपनीयता और पारदर्शिता (आरटीआई) के बीच तनाव।
- एसएमई की कार्यान्वयन क्षमता कम है।
- नागरिकों के बीच सीमित डेटा साक्षरता।

यूपीएससी के लिए स्थैतिक संदर्भ

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

- पुट्टास्वामी निर्णय (2017) के आधार पर → गोपनीयता अनुच्छेद 21 के तहत एक मौलिक अधिकार है।
- न्यायमूर्ति श्रीकृष्ण समिति (2018) ने डेटा संरक्षण विधेयक का पहला मसौदा दिया।
- पेश किए गए कई संस्करण (2019, 2021) → अंततः 2023 में पारित हो गए।

समाप्ति

डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण नियम, 2025 भारत के डेटा गवर्नेंस ढांचे में एक बड़ी छलांग है। जबकि वे उपयोगकर्ता अधिकारों को मजबूत करते हैं, जिम्मेदार डेटा उपयोग को बढ़ावा देते हैं, और भारत की डिजिटल अर्थव्यवस्था को वैश्विक मानकों के साथ एकीकृत करने में सक्षम बनाते हैं, आरटीआई अधिनियम में विवादास्पद संशोधन पारदर्शिता और लोकतांत्रिक जवाबदेही के बारे में गंभीर चिंताएं पैदा करता है। सरकार के सामने चुनौती डिजिटल राज्य में नागरिकों के विश्वास को बनाए रखते हुए गोपनीयता, पारदर्शिता और नवाचार को संतुलित करना है। भारत के डिजिटल भविष्य के लिए एक मजबूत, स्वतंत्र और जवाबदेह डेटा सुरक्षा इकोसिस्टम आवश्यक है।

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न: "डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम, 2023 बढ़ती डिजिटल अर्थव्यवस्था की जरूरतों के साथ व्यक्तिगत गोपनीयता को संतुलित करने का प्रयास करता है। हालांकि, राज्य को छूट और आरटीआई अधिनियम में संशोधन इस संतुलन को कमजोर करते हैं। चर्चा करना। (150 शब्द)

In news : Prelims

भारत फलों, सब्जियों, अनाज, मसालों, समुद्री उत्पादों और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के दुनिया के सबसे बड़े उत्पादकों में से एक है। जबकि भारतीय कृषि वस्तुओं की वैश्विक मांग बढ़ रही है, बंदरगाह से संबंधित लगातार अक्षमताएं - उच्च हैंडलिंग लागत, कमजोर कोल्ड-चेन इंफ्रास्ट्रक्चर, देरी और अपर्याप्त भंडारण - निर्यात प्रतिस्पर्धात्मकता को कम कर रही हैं और किसानों, प्रोसेसरों और निर्यातकों के लिए रिटर्न को कम कर रही हैं। भारत का वैश्विक कृषि निर्यात केंद्र बनने का लक्ष्य आधुनिक, कुशल और प्रौद्योगिकी-संचालित बंदरगाहों के बिना हासिल नहीं किया जा सकता है।

How ports can 'ferry' India's agri export ambition

Parashram Patil

Indian fruits, vegetables, spices, cereals, processed foods, meat and marine products reach markets across Asia, Europe, West Asia, and North America.

However, persistent port-related inefficiencies weaken the country's export competitiveness and erode value for farmers, processors and allied industries.

After all, only 10-20% of India's agri export is sent as air cargo; more than 80% goes through its ports.

If India is to widen its global agricultural footprint and enable the sector to contribute meaningfully to achieve its targeted \$5 trillion economy, ports must evolve into fully efficient, technology-enabled and future-ready trade gateways.



Steep costs: At Visakhapatnam, handling charges are significantly higher than in neighbouring ports. FILE PHOTO

teways. Field assessments at ports such as Visakhapatnam, Kandla, JNPT and JSW highlight recurring challenges that function as a hidden export tax. Cargo contamination – arising from outdated handling practices, inadequate fumigation and weak quality control – continues to un-

dermine India's credibility in quality-sensitive markets. Perishables, especially horticultural produce, face heightened spoilage risk due to prolonged berthing delays and the absence of dedicated agri-berths.

The warehousing deficit further compounds these

constraints. Many ports depend on storage facilities located more than 15 km from their terminals, inflating first-mile costs and extending transit time. Cold-chain capacities remain inadequate, while warehouse rentals are often uncompetitive for agri-exporters. At Visakhapatnam, handling charges are significantly higher than in neighbouring ports such as Kakinada and Gangavaram. The prolonged shortage of rake-siding labour and surveyors during extended operations has led to demurrage penalties and operational delays.

Untapped advantage

Ports such as Visakhapatnam and JSW enjoy proximity to some of India's most productive agricultural belts. Andhra Pradesh,

Maharashtra, Karnataka and Tamil Nadu collectively supply rice, banana, onion, spices, grapes, mango, marine products and processed foods – commodities with a strong and expanding global demand. Simultaneously, India's growing import needs – raw cashew, pulses, edible oils, cocoa products and natural rubber – require ports that can efficiently handle two-way agricultural trade flows. With the right investments in infrastructure modernisation, cold-chain systems and seamless hinterland connectivity, ports can serve as the bedrock of a resilient and high-value agricultural export ecosystem.

Transforming ports into globally competitive agricultural gateways requires a

targeted reform agenda

Investments in pre-cooling, irradiation, hot-water treatment and temperature-controlled storage can cut post-harvest losses by 30-40%.

Infrastructure grants under the Agricultural and Processed Food Products Export Development Authority (APEDA), the National Horticulture Board and PM Kisan Sampada Yojana can accelerate the development of modern export facilities.

Agencies such as Plant Quarantine, Food Safety and Standards Authority of India (FSSAI), National Plant Protection Organisation (NPPO), and customs must operate within port premises to reduce procedural delays.

(The writer is an agricultural economist)

वर्तमान संदर्भ

1. बंदरगाहों पर भारत की कृषि निर्यात निर्भरता

- कृषि निर्यात का केवल 10-20% हवाई मार्ग से जाता है;
- 80%+ बंदरगाहों पर निर्भर करता है, जिससे बंदरगाह दक्षता महत्वपूर्ण हो जाती है।

2. कृषि निर्यात को प्रभावित करने वाली भारतीय बंदरगाहों पर प्रमुख संरचनात्मक समस्याएं

A. उच्च हैंडलिंग शुल्क

- विशाखापत्तनम में, हैंडलिंग प्रभार पड़ोसी बंदरगाहों (काकीनाडा, गंगावरम) की तुलना में काफी अधिक है।
- "छिपे हुए निर्यात कर" की तरह कार्य करता है।

B. कार्गो संदूषण और गुणवत्ता में कमी

- पुरानी हैंडलिंग प्रथाएं

- खराब मशीनीकरण
- अपर्याप्त गुणवत्ता मानक
- फलों और सब्जियों जैसे खराब होने वाले पदार्थों के लिए विशेष रूप से हानिकारक।

C. भंडारण और कोल्ड-चेन की कमी

- कई बंदरगाह 15 किमी से अधिक की सुविधाओं पर निर्भर करते हैं → उच्च प्रथम-मील लागत है।
- कोल्ड-चेन अपर्याप्त रहती है; गोदाम का किराया अक्सर अप्रतिस्पर्धी होता है।
- देरी से बागवानी उत्पादों के खराब होने का खतरा बढ़ जाता है।

D. जनशक्ति और सर्वेक्षकों की कमी

- रेक-साइडिंग श्रमिकों और सर्वेक्षकों की कमी के कारण:
 - संचालन में देरी
 - विलंब शुल्क दंड
 - गुणवत्ता-संवेदनशील बाजारों में निर्यात विश्वसनीयता में कमी

3. कुछ बंदरगाहों के अप्रयुक्त लाभ

विशाखापत्तनम, जेएसडब्ल्यू जैसे बंदरगाह प्रमुख कृषि क्षेत्रों के करीब हैं:

- आंध्र प्रदेश
- महाराष्ट्र
- कर्नाटक
- तमिलनाडु

ये राज्य आपूर्ति करते हैं:

- चावल, केला, आम, प्याज, मसाले
- समुद्री उत्पाद
- प्रसंस्कृत खाद्य वस्तुएं

भारत की बढ़ती आयात जरूरतें- खाद्य तेल, दालें, प्राकृतिक रबर- भी कुशल दोतरफा कृषि व्यापार प्रबंधन की मांग करते हैं।

4. बंदरगाह आधारित कृषि निर्यात वृद्धि के लिए आवश्यक सुधार

A. कोल्ड-चेन इन्फ्रास्ट्रक्चर को मजबूत करना

- में निवेश:
 - प्री-कूलिंग
 - गर्म पानी का उपचार
 - किरणन
 - तापमान नियंत्रित भंडारण→ कटाई के बाद के नुकसान को 30-40% तक कम कर सकता है।

B. अवसंरचना अनुदान

- लीवरेज योजनाओं जैसे:
 - एपीडा
 - राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड
 - पीएम किसान संपदा योजना→ आधुनिक निर्यात सुविधाओं का निर्माण करना।

C. अंतर-एजेंसी समन्वय में सुधार

- प्रमुख एजेंसियां जिन्हें निर्बाध रूप से काम करना चाहिए:
 - पादप संगरोध
 - एफएसएसएआई
 - एनपीपीओ (राष्ट्रीय पादप संरक्षण संगठन)
 - सीमा शुल्क→ प्रक्रियात्मक देरी को कम करने के लिए।

D. प्रौद्योगिकी अपनाना

- आरएफआईडी ट्रैकिंग
- एंड-टू-एंड डिजिटल दस्तावेजीकरण
- रसद के लिए भविष्य कहनेवाला विश्लेषण
- पता लगाने की क्षमता के लिए ब्लॉकचेन

E. समर्पित कृषि-बर्थ

- बर्थिंग देरी से बचने में मदद करता है।
- संदूषण के जोखिम को कम करें।

1. बंदरगाह प्रशासन में सुधार

- का आधुनिकीकरण:
 - हैंडलिंग उपकरण
 - माल-भण्डारण
 - ऐसी प्रक्रिया
 - अंतिम मील कनेक्टिविटी
- पोर्ट इंफ्रा के लिए पीपीपी को बढ़ावा देना।

स्थैतिक संदर्भ

एपीडा (1985)

- वाणिज्य मंत्रालय के तहत।
- अनुसूचित कृषि और प्रसंस्कृत वस्तुओं के निर्यात को बढ़ावा देगा।
- बुनियादी ढांचे का समर्थन, प्रमाणन, ब्रांडिंग प्रदान करता है।

एफएसएसआई

- निर्यात के लिए खाद्य सुरक्षा मानकों को सुनिश्चित करता है।

एनपीपीओ

- पौधों/पादप उत्पादों के निर्यात के लिए आवश्यक पादप स्वच्छता प्रमाण पत्र जारी करता है।

सागरमाला कार्यक्रम

- इसका उद्देश्य बंदरगाहों का आधुनिकीकरण करना, कनेक्टिविटी में सुधार करना, लॉजिस्टिक्स लागत को कम करना है।

लॉजिस्टिक्स प्रदर्शन सूचकांक (LPI)

- भारत अभी भी निचले स्थान पर है:
 - समयोचितता
 - अवसरंचना
 - सीमा शुल्क निकासी

वेयरहाउसिंग (WDRA)

- वैज्ञानिक भंडारण सुनिश्चित करता है; अभी भी अंतराल मौजूद हैं।

समाप्ति

भारत को अपने कृषि निर्यात पदचिह्न को बढ़ाने और 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था की अपनी महत्वाकांक्षा को प्राप्त करने के लिए, बंदरगाहों को कुशल, प्रौद्योगिकी-सक्षम और भविष्य के लिए तैयार व्यापार गेटवे के रूप में विकसित होना चाहिए।

बंदरगाह बुनियादी ढांचे का आधुनिकीकरण, बेहतर कोल्ड-चेन क्षमता, हैंडलिंग शुल्क में कमी, बेहतर शासन और नियामक एजेंसियों के बीच निर्बाध समन्वय आवश्यक है। एक अच्छी तरह से काम करने वाला बंदरगाह इकोसिस्टम न केवल निर्यात प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाएगा बल्कि लाखों भारतीय किसानों और कृषि उद्यमों के लिए उच्च मूल्य प्राप्ति भी सुनिश्चित करेगा।

UPSC Prelims Practice Question

भारत के कृषि निर्यात के संदर्भ में, निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए:

- भारत के 80 प्रतिशत से अधिक कृषि-निर्यात बंदरगाहों के माध्यम से भेजे जाते हैं।
- केवल 10-20% कृषि-निर्यात एयर कार्गो का उपयोग करते हैं।
- विशाखापत्तनम और जेएसडब्ल्यू जैसे बंदरगाह प्रमुख कृषि उत्पादन बेल्ट के करीब स्थित हैं।

उपर्युक्त कथनों में से कौन सा सही है?

- केवल 1 और 2
- केवल 2 और 3
- केवल 1 और 3
- 1, 2 और 3

उत्तर: (d) 1, 2 और 3

The POCSO Act is gender-neutral by design

The Supreme Court of India recently issued notice on a petition arising from a case in which a woman stands accused of 'penetrative sexual assault' against a minor boy, an offence defined in Section 3 of the Protection of Children from Sexual Offences (POCSO) Act, 2012.

The petitioner has claimed that this provision is gender-specific, i.e., it applies only to male perpetrators and, hence, cannot apply to her. Its final outcome notwithstanding, the petition raises a question that is foundational to the scope of India's child sexual abuse law: can women be prosecuted for an offence under this provision?

The text supports gender neutrality

Going by available evidence, the answer seems to be in the affirmative. The POCSO Act is gender-neutral, qua both perpetrators and victims, for three reasons. First, if interpreted properly, the text of the Act does not restrict its application to male offenders.

The petitioner has argued that Section 3 is gender-neutral because it uses the pronoun 'he' for the perpetrator.

However, Section 13(1) of the General Clauses (GC) Act, 1897, states, 'words importing the masculine gender shall be taken to include females'. Since the GC Act lays down rules and definitions to aid statutory interpretation, Section 13(1) implies that unless the contrary is explicitly stated in, or appears from the context of the POCSO Act, 'he' includes 'she'.

This interpretation is reinforced by the definition of penetrative sexual assault in Section 3 of the POCSO Act. It encompasses acts beyond penile penetration, such as digital or object penetration, or oral penetration, which can be committed by female perpetrators as well.



Shraddha Chaudhary

is Assistant Professor,
School of Law,
BML Munjal
University, Gurgaon

The Protection of Children from Sexual Offences Act must be read as it was legislatively intended

The provision also covers situations where a person makes a child perform any of the listed penetrative acts with themselves or even with a third person, further underscoring its gender-neutral scope.

A deliberate legislative choice

Second, reliable official sources confirm the legislative intent of keeping the POCSO Act gender-neutral. For instance, the Ministry of Women and Child Development, Government of India in a written response to a question in the Lok Sabha, dated December 20, 2024, stated unambiguously that POCSO 'is a gender neutral Act'. Similarly, when the Protection of Children from Sexual Offences (Amendment) Bill, 2019 was tabled in the Lok Sabha, its 'Statement of Objects and Reasons' also specified that the POCSO Act was 'gender neutral'.

Nevertheless, it may be possible to argue that gender-neutrality here is only meant to apply to the minor victims of sexual offences (i.e., boys and girls under the age of 18 years), but not to the perpetrator. This is especially because one of the written answers of the Ministry of Women and Child Development, dated February 7, 2019, to a question raised in the Rajya Sabha, was that the POCSO Act 'covers sexual abuse of boys also as it is a gender-neutral Act'.

However, such a reading would misrepresent the legislative intent. Consider the provision on 'rape', found in Section 63 of the Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS), 2023 (the erstwhile Section 375 of the Indian Penal Code, 1860). It specifies that 'a man' commits rape if he commits certain forms of penetrative sexual acts against 'a woman'.

This is clearly a gender-specific provision which envisages that only women may be victims of rape and only men may be perpetrators of

rape. If Parliament intended to make the POCSO Act gender-specific, the wording of Section 3 of the POCSO Act, which covers substantially the same sexual acts as Section 63 of the BNS, would also contain the same gender-specific language.

That the POCSO Act does not make any such specification should be seen as a deliberate legislative choice, reflecting the intent to make the POCSO Act more broadly applicable.

It serves the law's purpose

Finally, there are strong normative reasons for interpreting the POCSO Act as gender-neutral for both victims and perpetrators. The Supreme Court, in *Sakshi vs Union of India* (2004), highlighted the diversity of abuse that any law aimed at protecting children must encompass when it observed that child sexual abuse often involves a wide range of sexual conduct beyond penile-vaginal intercourse.

Although patterns of child sexual abuse can differ depending on the genders of the victim and perpetrator, such abuse is fundamentally embedded in imbalances of power, trust and vulnerability. Thus, the majority of cases reported under the POCSO Act still involve male perpetrators and female victims, but research and survivor accounts reveal that women can and do commit sexual offences against children. A gender-specific reading of the POCSO Act would render these experiences invisible and deny justice to certain victims.

The law's objective should be to safeguard children from sexual abuse, irrespective of the sex or gender identity of the person inflicting it.

To read the POCSO Act as gender-neutral, when it concerns both victims and perpetrators, is thus to remain faithful to its text and to its purpose.

जी एस। पेपर 2 राजनीति, शासन

संघ लोक सेवा आयोग मुख्य अभ्यास प्रश्न : पीवाईक्यू : "चर्चा कीजिए कि क्या पॉक्सो अधिनियम, 2012 को बाल यौन अपराधों के अपराधियों के लिए लागू करने में लिंग-तटस्थ माना जा सकता है। इस तरह की व्याख्या के निहितार्थों की जांच करें। (150 शब्द)

संदर्भ:

यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण (POCSO) अधिनियम, 2012, बच्चों को यौन शोषण से बचाने के लिए भारत का प्राथमिक कानून है। एक नाबालिग लड़के पर भेदक यौन हमले की आरोपी महिला से जुड़े एक मामले पर हाल ही में सुप्रीम कोर्ट का नोटिस एक महत्वपूर्ण बहस को फिर से शुरू करता है: क्या अपराधियों के लिए अपने आवेदन में पॉक्सो लिंग-तटस्थ है? जबकि याचिकाकर्ता का तर्क है कि कानून केवल पुरुष अपराधियों को लक्षित करता है, वैधानिक व्याख्या, विधायी इरादे और बाल संरक्षण सिद्धांत पॉक्सो के लिंग-तटस्थ पढ़ने का समर्थन करते हैं।

वर्तमान संदर्भ

- एक महिला पर पॉक्सो की धारा 3 (पेनेट्रेटिव सेक्सुअल असॉल्ट) के तहत आरोप लगाए गए हैं।
- उनका तर्क है कि प्रावधान लिंग-विशिष्ट है क्योंकि यह पुरुष सर्वनाम ("वह") का उपयोग करता है।
- सुप्रीम कोर्ट ने नोटिस जारी किया है, जिससे यह भविष्य की व्याख्या के लिए एक महत्वपूर्ण मामला बन गया है।
- सरकारी रिकॉर्ड (2024 लोकसभा उत्तर) स्पष्ट रूप से बताते हैं: POCSO लिंग-तटस्थ है।
- यह मुद्दा व्यापक न्याय प्रणाली, बाल अधिकारों और भारतीय न्याय संहिता (बीएनएस) की धारा 63 (बलात्कार) जैसे अन्य लैंगिक कानूनों के साथ निरंतरता को प्रभावित करता है।

स्थैतिक संदर्भ

POCSO अधिनियम, 2012 के बारे में

- बच्चों (<18 वर्ष) को यौन उत्पीड़न, उत्पीड़न, पोर्नोग्राफी से बचाने के लिए अधिनियमित किया गया।
- लिंग-तटस्थ कानून → लड़के और लड़कियां दोनों पीड़ित हो सकते हैं।
- लिंग प्रवेश से परे अपराधों की एक विस्तृत श्रृंखला को शामिल करता है।
- स्पीडी ट्रायल के लिए विशेष अदालत।

सामान्य खंड अधिनियम, 1897

- धारा 13(1): मर्दाना लिंग आयात करने वाले शब्दों में महिलाएं शामिल हैं (जब तक कि संदर्भ अन्यथा न कहे)।
- वैधानिक व्याख्या का महत्वपूर्ण नियम।

भारतीय न्याय संहिता (2023) – धारा 63

- बलात्कार को एक पुरुष द्वारा एक महिला के खिलाफ किए गए कृत्य के रूप में परिभाषित करता है।
- स्पष्ट रूप से लिंग-विशिष्ट, POCSO के विपरीत।

सुप्रीम कोर्ट की मिसाल: साक्षी बनाम भारत संघ (2004)

- मान्यता प्राप्त बाल यौन शोषण शिश्र-योनि संभोग से परे है।

विस्तृत विश्लेषण

1. पाठ्य व्याख्या लिंग तटस्थता का समर्थन करती है

- धारा 3 में शामिल हैं:
 - अंक प्रवेश
 - वस्तु प्रवेश
 - मौखिक प्रवेश
 - बच्चे को यौन कृत्य कराना

- ये कृत्य केवल पुरुष ही नहीं, बल्कि किसी भी लिंग द्वारा किए जा सकते हैं।
- "वह" का उपयोग सामान्य खंड अधिनियम की धारा 13 (1) द्वारा ओवरराइड किया गया है → पुल्लिंग में स्त्रीलिंग शामिल है।

2. विधायी इरादा तटस्थता की पुष्टि करता है

- लोकसभा लिखित उत्तर (दिसंबर 2024): "POCSO एक लिंग-तटस्थ अधिनियम है।
- 2019 संशोधन विधेयक के बयान में इसे दोहराया गया है।
- यदि संसद लिंग विशिष्टता चाहती थी, तो उसने बीएनएस धारा 63 की तरह धारा 3 का मसौदा तैयार किया होगा - जिसमें स्पष्ट रूप से "एक पुरुष" और "एक महिला" का उल्लेख किया गया हो।
- इसके बजाय, POCSO जानबूझकर लिंग-तटस्थ भाषा का उपयोग करता है।

3. कानून का उद्देश्य तटस्थता की मांग करता है

- बाल यौन शोषण केवल पुरुष शिकारी/महिला पीड़ित ≠।
- दुरुपयोग शक्ति असंतुलन, विश्वास उल्लंघन से उत्पन्न होता है - न केवल लिंग गतिशीलता।
- शोध से पता चलता है कि महिलाएं यौन अपराध भी करती हैं, हालांकि संख्या कम है।
- लिंग-विशिष्ट व्याख्या होगी:
 - पुरुष पीड़ितों के अनुभवों को अमान्य करना
 - महिला अपराधियों को छूट
 - बाल सुरक्षा से समझौता करें

इस प्रकार, लैंगिक तटस्थता अधिनियम के उद्देश्य के अनुरूप है: सभी बच्चों को सभी अपराधियों से बचाना।

समाप्ति

पॉक्सो का पाठ, विधायी इरादा और बाल संरक्षण का व्यापक संवैधानिक लोकाचार सामूहिक रूप से पुष्टि करता है कि अधिनियम पीड़ितों और अपराधियों दोनों के लिए लिंग-तटस्थ है। कानून को पुरुष अपराधियों तक सीमित करने से कई बाल बच्चे लोगों को न्याय से वंचित किया जाएगा, दुर्व्यवहार के वास्तविक रूपों की अनदेखी की जाएगी और अधिनियम के उद्देश्य को कमजोर किया जाएगा। इसलिए कानून के सुरक्षात्मक ढांचे को बनाए रखने और यह सुनिश्चित करने के लिए लिंग-तटस्थ व्याख्या आवश्यक है कि हर बच्चे की सुरक्षा की जाए, भले ही अपराधी कोई भी हो।